



आधुनिक तथा प्राचीन कथा साहित्य का सामाजिक एवं सांस्कृतिक अध्ययन: एक आकलन

डॉ. दीपिका गेंवा

(हिंदी साहित्य), राजकीय महाविद्यालय गोटन, नागौर

सारांश

कथा-साहित्य किसी समाज की स्मृति, मूल्य-व्यवस्था और कल्पना का सबसे सजीव दस्तावेज़ होता है। प्रस्तुत शोध-आलेख वैदिक-औपनिषदिक आख्यान, महाकाव्य, जातक, पंचतन्त्र, बृहत्कथा-परम्परा और संस्कृत गद्य-कथा से लेकर आधुनिक हिन्दी उपन्यास और कहानी तक के प्रतिनिधि पाठों का सामाजिक-सांस्कृतिक अध्ययन करता है। तुलनात्मक-ऐतिहासिक पद्धति से निष्कर्ष निकलता है कि प्राचीन कथा-साहित्य धर्म, नीति और आदर्श के माध्यम से सामूहिक सामाजिक व्यवस्था को स्वर देता है, जबकि आधुनिक कथा-साहित्य व्यक्ति, यथार्थ और आलोचना के माध्यम से उसी व्यवस्था से प्रश्न करता है; फिर भी कथा-मैं-कथा, नीति-बोध और ऐतिहासिक पुनर्सृजन जैसे सूत्र दोनों को जोड़ते हैं।

बीज शब्द: कथा-साहित्य, प्राचीन कथा, आधुनिक हिन्दी उपन्यास, सामाजिक-सांस्कृतिक अध्ययन, जातक, पंचतन्त्र, यथार्थवाद

प्रस्तावना

कथा मनुष्य की सबसे पुरानी अभिव्यक्तियों में है। कथाओं के माध्यम से समाज अपनी स्मृति सँजोता, मूल्य सिखाता और अपने भय तथा आकांक्षाओं को आकार देता है। भारतीय परम्परा में कथा के अनेक रूप हैं: आख्यान और उपाख्यान, इतिहास और पुराण, जातक, नीतिकथा, लोककथा और गद्य-कथा। उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में मुद्रण, नयी शिक्षा और औपनिवेशिक आधुनिकता के साथ उपन्यास और आधुनिक कहानी जैसे नये रूप आये और कथा का सामाजिक कार्य बदल गया।

इस आलेख में 'प्राचीन' से आशय वैदिक काल से लगभग सातवीं-आठवीं शताब्दी तक की संस्कृत, पालि और प्राकृत कथा-परम्परा से है, और 'आधुनिक' से आशय उन्नीसवीं शताब्दी के अन्त से आज तक के हिन्दी उपन्यास और कहानी से। शोध-प्रश्न तीन हैं: प्राचीन कथा-साहित्य किन सामाजिक-सांस्कृतिक संरचनाओं और मूल्यों को प्रतिबिम्बित करता है; आधुनिक कथा-साहित्य में वे किस रूप में बदले हैं; और दोनों के बीच निरन्तरता तथा अन्तर कहाँ हैं। अध्ययन तुलनात्मक-ऐतिहासिक पद्धति पर आधारित है और प्रतिनिधि पाठों का सामाजिक-सांस्कृतिक विश्लेषण करता है। सैद्धान्तिक आधार रामचन्द्र शुक्ल की यह मान्यता है कि साहित्य समाज की मानसिक अवस्थाओं का संचित प्रतिबिम्ब होता है; इसलिए कथाओं को सामाजिक-सांस्कृतिक साक्ष्य की तरह पढ़ा गया है, पर इस ध्यान के साथ कि कथा सामाजिक यथार्थ की प्रतिकृति नहीं, उसकी रचनात्मक व्याख्या है। आधार-सामग्री में रामचन्द्र शुक्ल (1929), हजारीप्रसाद द्विवेदी (1940), डी. डी. कोसाम्बी (1965) और रोमिला थापर (1978) के ऐतिहासिक अध्ययन, तथा मीनाक्षी मुखर्जी (1985) और फ्रांचेस्का ऑर्सेनी (2002) के आधुनिक भारतीय उपन्यास और हिन्दी सार्वजनिक क्षेत्र सम्बन्धी अध्ययन सम्मिलित हैं। प्राचीन ग्रन्थों के काल-निर्धारण पर विद्वानों में मतभेद हैं, इसलिए तिथियाँ अनुमानित और परम्परा-आधारित मानी जानी चाहिए।

प्राचीन कथा-साहित्य: स्वरूप और सामाजिक सन्दर्भ

2.1 वैदिक-औपनिषदिक आख्यान और महाकाव्य

ऋग्वेद के संवाद-सूक्तों में पुरूरवा-उर्वशी (10.95) और यम-यमी (10.10) जैसे संवादों में कथा के बीज मिलते हैं; ब्राह्मण-ग्रन्थों ने इन आख्यानो को विस्तार दिया। उपनिषदों के आख्यान ज्ञान की खोज को कथा में बाँधते हैं: सत्यकाम जाबाल की कथा में पितृ-परिचय से अनभिज्ञ बालक सत्य-निष्ठा के आधार पर स्वीकार किया जाता है, और याज्ञवल्क्य-मैत्रेयी संवाद स्त्री की दार्शनिक सहभागिता दिखाता है। रामायण और महाभारत को परम्परा 'इतिहास' कहती है, जिसका अर्थ है 'ऐसा ही हुआ था'; परम्परा के अनुसार रामायण में चौबीस हज़ार और महाभारत में एक लाख श्लोक हैं। इन महाकाव्यों में परिवार, राज्य, धर्म और युद्ध के प्रश्न कथा के माध्यम से सामाजिक आचार-संहिता को आकार देते हैं। कथा यहाँ समाजीकरण का माध्यम भी है और सामाजिक व्यवस्था की वैधता का भी।

2.2 जातक, नीतिकथा और बृहत्कथा

पालि साहित्य में जातक बुद्ध के पूर्वजन्मों की कथाएँ हैं; परम्परागत गणना में इनकी संख्या 547 मानी जाती है। इनमें राजा, व्यापारी, किसान, पशु और साधारण जन पात्र बनते हैं, और करुणा, त्याग तथा कर्म-फल जैसे मूल्य कथा के केन्द्र में रहते हैं; भरहुत और

साँची जैसे स्तूपों में जातक-दृश्यों का अंकन इनकी लोकप्रियता का प्रमाण है। पंचतन्त्र की परम्परा के अनुसार विष्णुशर्मा ने महिलारोष्य के राजा अमरशक्ति के तीन मन्दबुद्धि राजकुमारों को राजनीति और व्यवहार-कुशलता सिखाने के लिए पाँच तन्त्रों में इसकी रचना की। कथा-में-कथा की इस पशु-कथा-शैली ने ईरान, अरब और यूरोप तक यात्रा की: छठी शताब्दी में इसका पहलवी अनुवाद हुआ और आठवीं शताब्दी में इब्न अल-मुकफ़्फ़ा ने अरबी में 'कलीला व दिम्ना' के नाम से इसे प्रस्तुत किया। हितोपदेश भी इसी नीतिकथा-परम्परा से जुड़ा है।

बृहत्कथा गुणाढ्य की पैशाची भाषा की कृति मानी जाती है, जो मूल रूप में उपलब्ध नहीं है; उसके रूपान्तरों में क्षेमेन्द्र की 'बृहत्कथामंजरी' और ग्यारहवीं शताब्दी में कश्मीर के कवि सोमदेव का 'कथासरित्सागर' प्रमुख हैं। सोमदेव ने इसे रानी सूर्यमती के मनोरंजन के लिए रचा। इसमें समुद्र-यात्रा, व्यापार, प्रेम, विवाह, जादू और छल की कथाएँ मिलती हैं, जो व्यापारी-वर्ग, नगर-जीवन और राज-दरबार की संस्कृति को सामने लाती हैं। इनमें स्त्री-चित्रण प्रायः दोहरा है: कहीं वह चतुर और साहसी है, कहीं छलपूर्ण और संदिग्ध; यह तत्कालीन पितृसत्तात्मक सामाजिक दृष्टि का संकेत है।

2.3 संस्कृत गद्य-कथा

सातवीं शताब्दी के आसपास दण्डी का 'दशकुमारचरित' और बाणभट्ट की 'कादम्बरी' संस्कृत गद्य-कथा के शिखर माने जाते हैं। 'दशकुमारचरित' में दस राजकुमारों के साहसिक अनुभवों के माध्यम से तत्कालीन नगर-जीवन, छल-प्रपंच और राजनीति का चित्र मिलता है, जबकि 'कादम्बरी' अलंकृत भाषा में प्रेम और पुनर्जन्म की जटिल कथा कहती है। ये रचनाएँ दरबारी, शिक्षित और अभिजात पाठक-वर्ग के लिए थीं, इसलिए उनकी भाषा और संस्कृति में वही अभिजात रुचि दिखती है।

2.4 प्राचीन कथा का सामाजिक चित्र

इन कथाओं से तत्कालीन समाज की कुछ प्रवृत्तियाँ उभरती हैं: वर्ण-आश्रम व्यवस्था और यज्ञ-संस्कृति (वैदिक-औपनिषदिक कथाएँ), राजतन्त्र और राजनय (महाकाव्य, पंचतन्त्र), व्यापारिक नगर-संस्कृति (जातक, बृहत्कथा) और अभिजात दरबारी रुचि (संस्कृत गद्य-कथा)। कथा का उद्देश्य प्रायः उपदेश और मनोरंजन का मिश्रण है; शिक्षा के साथ रस की यह प्रवृत्ति भारतीय कथा-परम्परा की विशेषता है, और पंचतन्त्र की प्रस्तावना-कथा में तो राजकुमारों की शिक्षा ही उसकी रचना का घोषित प्रयोजन है।

आधुनिक कथा-साहित्य का उदय और विकास

प्राचीन और आधुनिक के बीच मध्यकालीन कथाओं ने सेतु का काम किया। जायसी का 'पद्मावत' (1540) अवधी में सूफ़ी प्रेमाख्यान-परम्परा का प्रतिनिधि ग्रन्थ है, जो इतिहास, लोक-कथा और रहस्यवाद को जोड़ता है। उन्नीसवीं शताब्दी के आरम्भ में कलकत्ता के फ़ोर्ट विलियम कॉलेज (स्थापना 1800) में लल्लू लाल के 'प्रेमसागर' (लगभग 1803) जैसी रचनाओं से खड़ी बोली गद्य की नींव मज़बूत हुई।

आधुनिक कथा-साहित्य का उदय मुद्रण, पत्र-पत्रिकाओं, नयी शिक्षा और सामाजिक सुधार-आन्दोलनों से जुड़ा है। लाला श्रीनिवासदास का 'परीक्षा गुरु' (1882) प्रायः हिन्दी का पहला आधुनिक उपन्यास माना जाता है, जिसमें दिल्ली के व्यापारी-वर्ग के जीवन के सहारे नैतिक शिक्षा दी गयी है। देवकीनन्दन खत्री का 'चन्द्रकान्ता' (1888) तिलिस्म और ऐयारी के माध्यम से व्यापक पाठक-वर्ग तक पहुँचा। चन्द्रधर शर्मा गुलेरी की 'उसने कहा था' (1915, 'सरस्वती' में) ने प्रथम विश्वयुद्ध की पृष्ठभूमि में प्रेम, कर्तव्य और बलिदान को आधुनिक कहानी की मनोवैज्ञानिक गहराई दी। पत्रिकाओं की भूमिका निर्णायक थी: 'सरस्वती' (1900 से) जैसी पत्रिकाओं ने कहानी और उपन्यास के पाठक-वर्ग का निर्माण किया, और ऑर्सेनी (2002) के अनुसार 1920-40 के दशकों में हिन्दी का सार्वजनिक क्षेत्र पत्रिकाओं, प्रकाशकों और साहित्यिक संस्थाओं के जाल से बना।

प्रेमचन्द के 'गोदान' (1936) ने किसान-जीवन के माध्यम से औपनिवेशिक-सामन्ती व्यवस्था का समग्र चित्र दिया। स्वतन्त्रता के बाद फणीश्वरनाथ रेणु का 'मैला आँचल' (1954) आंचलिक जीवन को केन्द्र में लाया; यशपाल का 'झूठा सच' (1958-60) और राही मासूम रज़ा का 'आधा गाँव' (1966) विभाजन और उसके सामाजिक प्रभावों को देखते हैं; श्रीलाल शुक्ल का 'राग दरबारी' (1968; साहित्य अकादमी पुरस्कार 1969) ग्रामीण सत्ता-संरचना पर व्यंग्य करता है; भीष्म साहनी का 'तमस' (साहित्य अकादमी पुरस्कार 1975) साम्प्रदायिक हिंसा के कारणों को उघाड़ता है; और कमलेश्वर का 'कितने पाकिस्तान' (2000; साहित्य अकादमी पुरस्कार 2003) विभाजन की स्मृति को बहु-कालिक सन्दर्भ में रखता है।

आधुनिक कथा-साहित्य में स्त्री-प्रश्न और सत्ता-विमर्श आरम्भ से ही केन्द्र में रहे हैं। प्रेमचन्द के 'सेवासदन' (1919) में दहेज और अनमेल विवाह की सामाजिक विडम्बना एक स्त्री के जीवन-संघर्ष के माध्यम से सामने आती है। स्वतन्त्रता के बाद कृष्णा सोबती की 'मित्रो मरजानी' (1966) में विवाहित स्त्री अपनी दैहिक इच्छा और आत्म-सम्मान को बिना संकोच व्यक्त करती है, जो प्राचीन कथा-संसार की मर्यादित स्त्री-छवि से स्पष्ट रूप से भिन्न है; और मन्नू भण्डारी का 'महाभोज' (1979) सत्ता-राजनीति के भीतर एक दलित युवक की हत्या के प्रसंग से लोकतान्त्रिक संस्थाओं की विफलता को उजागर करता है। दोनों परम्पराओं के मुख्य अन्तर तालिका 1 में सारांशित हैं।

तालिका 1: प्राचीन और आधुनिक कथा-साहित्य की तुलना

आयाम	प्राचीन कथा-साहित्य	आधुनिक कथा-साहित्य
कथ्य	आख्यान, नीति, धर्म, कर्म-फल और राजनय	सामाजिक यथार्थ, व्यक्ति, वर्ग, जाति और लिंग
पात्र	देवता, राजा, ऋषि, पशु-पात्र, सार्थवाह	किसान, मध्यवर्ग, स्त्री, दलित, मज़दूर
शिल्प	कथा-में-कथा, पशु-कथा, पद्य-गद्य मिश्रण	यथार्थवादी वर्णन, मनोविश्लेषण, आंचलिकता, व्यंग्य
माध्यम	श्रवण-परम्परा, कथावाचक, पाण्डुलिपि	मुद्रण, पत्रिका, पाठक-वर्ग; अब डिजिटल
रचनाकार	प्रायः पुरुष और अभिजात (अपवाद सहित)	स्त्री, दलित और आदिवासी भी रचनाकार
मूल्य-दृष्टि	धर्म, नीति और आदर्श पर बल	प्रश्न, आलोचना और मानवीय गरिमा पर बल

स्रोत: शोधकर्ता द्वारा संकलित।

तुलनात्मक विश्लेषण: निरन्तरता और परिवर्तन

प्राचीन कथा-साहित्य में सामाजिक व्यवस्था प्रायः स्वीकृत पृष्ठभूमि है और कथा का काम उसके भीतर आचरण की शिक्षा देना है: कर्म-फल, धर्म, मित्रता, राजनय और उदारता। जातक और पंचतन्त्र में पात्र प्रायः प्रारूप होते हैं (राजा, मन्त्री, व्यापारी, सियार, कौआ), जिनके माध्यम से सामान्य सत्य कहा जाता है। आधुनिक कथा-साहित्य में केन्द्र व्यक्ति और उसके विशिष्ट अनुभव की ओर खिसकता है; किसान, स्त्री, दलित और मज़दूर पात्र बनते हैं और सामाजिक संरचना स्वयं प्रश्न का विषय बन जाती है। पंचतन्त्र की नीति व्यावहारिक राजनय सिखाती है, जबकि प्रेमचन्द की 'कफ़न' जैसी कहानी नीति नहीं, नैतिकता के सामाजिक आधार पर ही प्रश्न उठाती है।

शिल्प और माध्यम के स्तर पर प्राचीन कथाएँ श्रवण-परम्परा में पली थीं: कथावाचक, कथा-में-कथा, पद्य और गद्य का मिश्रण तथा दोहराव उनकी विशेषताएँ हैं। मुद्रण ने कथा को एकान्त पाठ की वस्तु बनाया, जिसके साथ मनोवैज्ञानिक वर्णन, आंचलिक बोली और व्यंग्य जैसे शिल्प विकसित हुए; आज डिजिटल माध्यम पाठक और लेखक के सम्बन्ध को फिर बदल रहे हैं, और ऑडियो-कथा तथा पॉडकास्ट जैसे रूप कथा को पुनः श्रवण-परम्परा की ओर ले जा रहे हैं। बीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में स्त्री-लेखन और अन्तिम दशकों में दलित-लेखन ने कथा के कर्ता को ही बदला: ओमप्रकाश वाल्मीकि की 'जूठन' (1997) जैसी आत्मकथाएँ और कृष्णा सोबती तथा मन्नू भण्डारी जैसी लेखिकाएँ उन अनुभवों को स्वर देती हैं जो प्राचीन कथा के श्रोता-समाज में प्रायः अदृश्य थे।

फिर भी निरन्तरता के सूत्र स्पष्ट हैं। प्रेमचन्द की 'दो बैलों की कथा' में बैल-पात्रों के सहारे दासता और स्वतन्त्रता का प्रश्न उठाया गया है; मनुष्य-समाज पर पशु-पात्रों के माध्यम से टिप्पणी करने की यह युक्ति जातक और पंचतन्त्र की पशु-कथा-परम्परा की याद दिलाती है। हजारीप्रसाद द्विवेदी का 'बाणभट्ट की आत्मकथा' (1946) प्राचीन दरबारी संस्कृति को आधुनिक मानवीय दृष्टि से पुनः रचता है; राहुल सांकृत्यायन का 'वोल्गा से गंगा' (1943) बीस कहानियों में लगभग छह हज़ार ईसा-पूर्व से 1942 तक की सामाजिक यात्रा प्रस्तुत करता है; और भगवतीचरण वर्मा का 'चित्रलेखा' (1934) पाप-पुण्य के प्रश्न को चन्द्रगुप्त मौर्य-कालीन पाटलिपुत्र की पृष्ठभूमि में उठाता है। इन उदाहरणों से स्पष्ट है कि आधुनिक कथा ने प्राचीन कथा-रूपों को त्यागा नहीं, नये सामाजिक प्रश्नों के लिए उन्हें पुनः उपयोग में लिया।

निष्कर्ष

अध्ययन के निष्कर्ष इस प्रकार हैं। पहला, प्राचीन कथा-साहित्य वर्ण-आश्रम, यज्ञ-संस्कृति, राजतन्त्र, व्यापारी-वर्ग और नैतिक-नीतिपरक शिक्षा की सामाजिक संरचना को अभिव्यक्ति देता है और उसका उद्देश्य प्रायः आचरण की शिक्षा तथा मनोरंजन है। दूसरा, आधुनिक कथा-साहित्य औपनिवेशिक आधुनिकता, मुद्रण और लोकतान्त्रिक चेतना के साथ व्यक्ति, यथार्थ और आलोचना को केन्द्र में लाता है; हाशिये के समुदाय और स्त्रियाँ विषय ही नहीं, रचनाकार भी बनती हैं। तीसरा, दोनों के बीच कथा-में-कथा, नीति-बोध, पशु-कथा और ऐतिहासिक पुनर्सृजन जैसे सूत्र निरन्तर बने हुए हैं, इसलिए आधुनिक कथा को प्राचीन से कटी हुई नहीं, उसका रूपान्तरित विस्तार मानना अधिक उपयुक्त है। इस अध्ययन की सीमा यह है कि यह प्रतिनिधि पाठों पर आधारित है और प्राचीन ग्रन्थों के काल-निर्धारण में मतभेद रहे हैं; आगे लोक-कथाओं, मौखिक परम्पराओं और अन्य भारतीय भाषाओं के कथा-साहित्य के साथ तुलनात्मक अध्ययन किया जा सकता है।

सन्दर्भ-ग्रन्थ सूची

(क) मूल एवं अनूदित पाठ

- Olivelle, P. (Trans.) (1997). The Pañcatantra: The Book of India's Folk Wisdom. Oxford: Oxford University Press.
- Tawney, C. H. (Trans.) (1880–1884). The Kathā Sarit Sāgara; or, Ocean of Streams of Story. Calcutta: Asiatic Society.
- जायसी, पद्मावत (1540); लल्लू लाल, प्रेमसागर (लगभग 1803); लाला श्रीनिवासदास, परीक्षा गुरु (1882); देवकीनन्दन खत्री, चन्द्रकान्ता (1888); गुलेरी, 'उसने कहा था' (1915)।



संस्कृति संगम, ISSN: 3049-0111

खंड 4 अंक 2, जुलाई - दिसंबर 2026

4. प्रेमचन्द, गोदान (1936); रेणु, मैला आँचल (1954); यशपाल, झूठा सच (1958-60); राही मासूम रज़ा, आधा गाँव (1966); श्रीलाल शुक्ल, राग दरबारी (1968); भीष्म साहनी, तमस (साहित्य अकादमी पुरस्कार, 1975); कमलेश्वर, कितने पाकिस्तान (2000)।
5. हजारीप्रसाद द्विवेदी, बाणभट्ट की आत्मकथा (1946); राहुल सांकृत्यायन, वोल्गा से गंगा (1943); भगवतीचरण वर्मा, चित्रलेखा (1934)।

(ख) सहायक ग्रन्थ

1. रामचन्द्र शुक्ल (1929). हिन्दी साहित्य का इतिहास।
2. हजारीप्रसाद द्विवेदी (1940). हिन्दी साहित्य की भूमिका।
3. Kosambi, D. D. (1965). The Culture and Civilisation of Ancient India in Historical Outline. London: Routledge & Kegan Paul.
4. Mukherjee, M. (1985). Realism and Reality: The Novel and Society in India. Delhi: Oxford University Press.
5. Orsini, F. (2002). The Hindi Public Sphere 1920-1940: Language and Literature in the Age of Nationalism. New Delhi: Oxford University Press.
6. Thapar, R. (1978). Ancient Indian Social History: Some Interpretations. New Delhi: Orient Longman.